SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श

नयना पहाड़िया, शिक्षा विभाग,
हेमलता साहू, (Ph.D.), शिक्षा विभाग,
सेठ फूलचंद अग्रवाल महाविद्यालय, नवापारा, जिला–रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Authors
नयना पहाड़िया, शिक्षा विभाग,
हेमलता साहू, (Ph.D.), शिक्षा विभाग,
सेठ फूलचंद अग्रवाल महाविद्यालय,
नवापारा, जिला–रायपुर, छत्तीसगढ़, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 22/09/2022
Revised on : -----
Accepted on : 29/09/2022
Plagiarism : 02% on 22/09/202

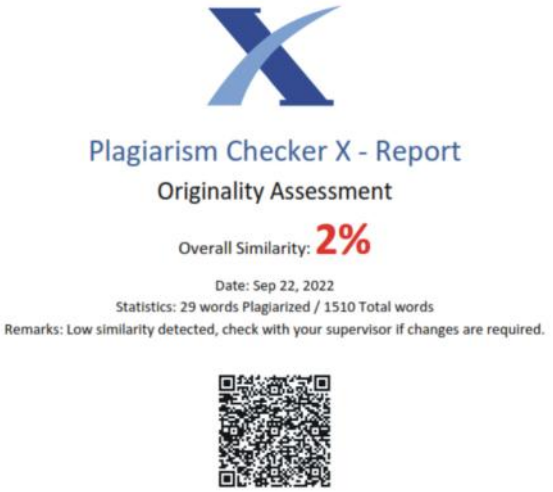

शोध सार

समय जीवन को कभी सुख और दुख के पंख पर उड़ता फिरता है। वैसे ही स्त्रियों की अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करना उतना पुराना चला आ रहा है। स्त्री के आत्मबोध, आत्मविश्लेषण एवं आत्माविव्यक्ति का संघर्ष हैं। विमर्श रूढ़ हो चुकी मान्यताओं, परम्पराओं के प्रति अंसतोष व उससे मुक्ति का स्वर है। स्त्री विमर्श नारी चेतना के पर्याय के साथ एक सामूहिक चेतना है। काल के विभिन्न आयामों में नारी जीवन में उतार–चढ़ाव होते आये है। वैदिक युग नारी का स्वर्णिम काल रहा तो मध्यकाल में नारी की दशा दयनीय हो गई। आधुनिक काल के साहित्यकारों के साहित्य में नारी सिर्फ नायिका के रूप में ही चित्रित नहीं गई बल्कि उसके उपेक्षित जीवन को न्याय भी मिला। बीसवी शताब्दी के अंतिम समय से लेकर वर्तमान युग तक हिन्दी साहित्य में नारी चेतना दृष्टिगत होती है। हिन्दी साहित्य में भी नारी जागरण के स्वर मुखर होने लगे, तत्कालीन समय में पुरूष की सहचारिणी, सहभागिनी के रूप में चित्रित नारी की स्थिति में परिवर्तन होता रहा।

मुख्य शब्द

स्त्री, साहित्य, पुरूष प्रधान समाज, सामाजिक स्थिति.

प्रस्तावना

समय जीवन को कभी सुख और दुख के पंख पर उड़ता फिरता है वैसे ही स्त्रियों को अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष उतना ही पुराना है जितनी पुरानी पितृसत्तात्मक व्यवस्था है। पितृसत्ता स्त्रियों को पुरूषों के अधीन रखने के लिए तमाम तरह के बंधनों में जकड़ देने का नाम है।

हर्टमैन कहते है स्त्रियों की लडाई के मोर्चे दो होने चाहिए – पितृसत्तात्मक से घर में और पूँजीवादी ताकतों

से बाहर – याने 'बराबर मजदूरी की बराबर पगार' और 'तुलनीय काम की तुलनीय पगार' दोनों जरूरी है।

स्त्री अस्मिता से अभिप्राय

स्त्री के स्व के अस्तित्व या उसकी पहचान से है। जब स्त्री अपने समाज व परिवेश में अपने हिसाब से स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है तब वह परिवार और समाज में अपने अस्तित्व की तलाश करती है। लेकिन धर्म व सामाजिक अर्थव्यवस्था के नाम पर उसे विवाह और परिवार से इस तरह बांध दिया जाता है कि वह अपनी स्वतंत्रता का विसर्जन और आत्मसमर्पण करने की कीमत पर ही सम्मान की जिंदगी बिता सकती है। इस कारण स्त्री आज तक समाज में बेटी, बहन और माँ के रूप में ही पहचानी जाती रही है। लेकिन वर्तमान परिपेक्ष्य में स्त्री इन बंधनों से मुक्त होकर स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में अपनी पहचान कायम करना चाहती है। यही से प्रारंभ होती है– स्त्री की अस्मिता की तलाश व स्त्री अस्मिता का विमर्श।

स्त्री विमर्श

स्त्री के आत्मबोध, आत्मविश्लेषण एवं आत्मभिव्यक्ति का संघर्ष है। विमर्श रूढ़ हो चुकी मान्यताओं, परम्पराओं के प्रति असंतोष व उससे मुक्ति का स्वर हैं। स्त्री विमर्श नारी चेतना के पर्याय के साथ एक सामूहिक चेतना है। नारी चेतना स्त्री की अस्मिता से जुड़ा एहसास है। पुरूष प्रधान समाज के दोहरे मापदण्ड़ों मूल्यों व अंतर्विरोधों को समझने व पहचाने की गहरी अंर्तदृष्टि है। नारी अस्मिता का संघर्ष समाज की अनूठी देन है। साहित्य और समाज परस्पर अन्योन्यश्रित है। वह एक–दूसरे को प्रभावित करते हुए परंपरागत मूल्यों के प्रवाह में परिवर्तन लाते है। सकारात्मक परिवर्तन उसे पतन की ओर धकेलता है। ''यंत्रनार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'' में आस्था रखने वाले देश में स्त्री को अस्मिता परिवेश और जीवन मूल्यों के साथ–साथ परिवर्तित होती रही है।

स्त्री विमर्श की परिभाषा

महिला विमर्श को पश्चिम और पूरब में भिन्न –भिन्न ढंग से परिभाषित किया है। पश्चिम की विद्वान इस्टेल फ्रडमेन ने भिन्न शब्दों में परिभाषित किया है।

''Feminism is a belief that although women and men are inherently of equal worth, most ties privilege men as a group. As a result, Social movements are necessary to achieve political equality between women and men, with the understanding that gender always intersects with other Social hierarchies''

अर्थात् पुरूष एवं स्त्री सम महत्व रखते है। अधिकांश समाजों में पुरूष को वरीयता देते है। अतः स्त्री –पुरूष समानता के लिए सामाजिक आंदोलन जरूरी है क्योंकि लिंगाधारित अंतर अन्य सामाजिक परंपराओं में प्रवेश करता है जो हो यह निश्चित करता है कि यह चिंतन अन्याय के विरूद्ध है।

स्त्री होती नहीं बनाई जाती है

इसी संदर्भ में प्रसिद्व समाजशास्त्री सिमोन द बोउवार ने ''द सेकण्ड सेक्स'' में कहा है कि ''स्त्री पैदा नही होती बनाई जाती है'' इसी दृष्टिकोण के कारण नारी का जीवन सदैव यातनाओं व त्रासदियों से ओत–प्रोत रहा है। समाज की इस मनोवृत्ति के कारण स्त्री को अपने अस्तित्व को पहचान दिलाने हेतु न जाने कितनी प्रतीक्षा करनी होगी।

स्त्री अस्मिता के केन्द्र में अस्मिता केन्द्रीय पुरी है जिसमें स्त्री–पुरूष में भेद तो प्रकृति प्रदत्त है। कोकिन (जेंडर) भेद के कारण उसकी अस्मिता संदिग्ध हो गयी है किसी भी व्यक्ति को एक समय सीमा तक ही दबाया जा सकता है, अवसर पाते ही वह अपनी अस्मिता (पहचान) अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर उठता है, फिर स्त्री तो इस पावन धरा की मानवी और बौद्विक प्राणी है तो उसकी अस्मिता को बलपूर्वक कब तक दबाया जा सकता है। स्त्री अस्मिता वास्तव में है क्या? एक स्त्री का अस्तित्व उसकी पहचान उसका यह अस्तित्व, उसकी यह पहचान समाज में किसके द्वारा तथा किन मानदण्डों द्वारा और कैसे निर्धारित की जायेगी? क्या उसका मूल्यांकन स्वयं स्त्री करेगी या फिर पुरूष या दोनों मिलकर करेगें? स्त्री अपनी अस्मिता स्थापित करती है। तो वह एक हद तक सही

है, किन्तु यदि पुरूष उसकी अस्मिता का मूल्यांकन करेगा तो निश्चित ही उस अस्मिता का कोई अस्तित्व नहीं रह जाऐगा क्योकि पुरूष के द्वारा नारी का चरित्र अधिक आदर्श बन सकता है परन्तु अधिक सत्य नहीं विकृति के अधिक निकट पहुँच सकता है, यथार्थ के अधिक समीप नहीं। इस संदर्भ में महादेवी वर्मा के वकृत्य को उदधृत करना समाचीन प्रतीत होता है कि स्त्री अस्मिता एक व्यापक संकल्पना है जिसके तहत प्रत्येक महिला को उसकी शारीरिक और बौद्विक क्षमता के विकास, प्रदर्शन और प्रयोग पर पूरी अधिकारिता प्राप्त है। वस्तुतः स्त्री अस्मिता' महिला सशक्तिकरण से जुड़ा सीधा प्रश्न है, जिसमें महिलाओं को पुरूषों के समकक्ष राजनैतिक, वैधानिक, मानसिक, आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में अपने परिवार, राष्ट्र और संस्कृति की पृष्ठ भूमि में निर्णय लेने की स्वायत्ता शामिल है।

महिलाओं को उनका सही स्थान पाने के लिए सबसे पहली शर्त यह होगी कि उन्हें समानता के धरातल पर न्याय उपलब्ध हो, यथार्थ के धरातल पर समानता स्थापित हो अन्यथा शासन– सत्ता, देश, दुनिया महिलाओं की असमान दशा को दूर करने के लिए चाहे जितने भी नियम–कानून बना ले, बौद्विक–विमर्श कर ले, लेख लिख ले, जोशीले नारे लगा ले, कुछ भी सकारात्मक परिवर्तन नहीं आएगा। वैश्विक आबादी का आधा हिस्सा इसी विडम्बनापूर्ण अन्याय का शिकार है। इसी अन्याय को दूर करने के लिए साहित्य में स्त्री–अस्मिता, स्त्री अस्मिता के संबध में 'स्त्री विमर्श का मामला व्यक्तिगत नहीं सामाजिक है। स्त्री की स्थिति में सुधार लाने के लिए व्यवस्था में परिवर्तन लाना होगा।

स्त्री–अस्मिता के आदि बिन्दु पर सबसे पहले इस संघर्ष को चिन्हित किया जाता है। पुरूष–प्रधान समाज स्त्री को व्यक्ति की बजाय 'वस्तु' की संज्ञा देता है और उस वस्तु पर पुरूष के रूप में पहले पिता का फिर पति का और अंततः पुत्र का अधिकार होता है। इस प्रकार उसे बचपन से वृद्वावस्था तक बंधनों में जकड़ दिया जाता है।

पिता रक्षति कौमारे, भर्ता रक्षति यौवने।
पुत्रश्च स्यविरे मारे, न स्त्री स्वतान्त्र्य मर्हती।।

इस तरह स्त्री न कभी स्वतंत्र व्यक्ति की तरह पहचानी जाती है और न कभी वह खुद पर अपना अधिकार भाव रख सकती है। इस तरह स्त्री का एक पराधीन वस्तु होना उसकी अंतिम नियति मानी गयी जिसके विरूद्ध स्त्री स्वतंत्रता का संघर्ष शुरू हुआ।

पिछले कुछ दशक में हिन्दी साहित्च मे स्त्री लेखन का व्यापक प्रस्फुटन एक अनुठी और ऐतिहासिक घटना है। यहाँ स्त्री लेखन एक सामाजिक सच्चाई और अस्मिता के संघर्ष की चुनौती के रूप में सामने आता है। यह स्त्री के अपने नजरिए में स्त्री लेखन का नया पाठ है। वीर भारत तलवार के शब्दों में हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श से दयनीय कोई दुसरा विमर्श नहीं है, तब भी स्त्री विमर्श पर काफी लिखा पढ़ गया अन्य विषयों और विधाओं की तरह पश्चिमी नारी आंदोलनों और मुक्ति का प्रभाव हमारे लेखक–लेखिकाओं पर भी पड़ा। इसके सिद्वांत एवं दर्शन मुख्य रूप से पश्चिमी मूल्यों एवं दर्शन पर आधारित रहे है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यही स्थापित होता है कि अस्मिता प्राप्ति का संघर्ष प्रताड़ना झेलने और अपमान होने पर उभरता है और अंततः एक दिन अपनी पहचान को प्राप्त करने के लिए उग्र रूप धारण करती है। स्त्री अस्मिता प्राप्ति के इस संघर्ष के विश्लेषण के उपरांत हम कह सकते है कि जहाँ कुछ विद्वानों ने अस्मिता को हिंसा का कारण माना है, वहीं कुछ विद्वानों ने इसे समाज में उपस्थित भिन्न लोगों से जुड़े उनके भिन्न सम्मानों के साथ जोड़ा है। स्त्री को कई रूपों में अत्याचार व अन्याय के विरूद्व संघर्ष करते हुए परिलक्षित कर अपनी अस्मिता व अस्तित्व की पहचान हेतु पुरूष प्रधान समाज से संघर्ष करने की हिम्मत व सोच प्रदान करता है। इस प्रकार स्त्री लेखन से स्त्रियों के जीवन को यथार्थ, स्थिति, उनकी आशा और आकांक्षा, उनके सपने और संघर्ष उनकी समस्याएँ और सम्भावनाएँ सामने आई है।

संदर्भ सूची

1. कुमार राधा, *स्त्री संघर्ष का इतिहास,* वीणा प्रकाशन 1जनवरी 2011।
2. खेतान प्रभाः *उपनिवेश में स्त्री, स्त्री उपेक्षिता,* राजकमल प्रकाशन।
3. यादव राजेन्द्र, *आदमी के निगाह में औरत, औरत उत्तर कथा,* राजकमल प्रकाशन 28 अक्टूबर 2013।
4. भारती धर्मवीर, *सीमन्तनी उपदेश,* वाणी प्रकाशन।
5. जैन अरविन्द, औरत होने की सजा, उत्तराधिकार बनाम पुत्राधिकार, औरत, अस्तित्व और अस्मिता, न्यायक्षेत्र, अन्यायक्षेत्र, यौन हिन्सा, राजकमल प्रकाशन 2016।
6. यादव प्रमोद कुमार, (2016) अपनी माटी, त्रैमासिक पत्रिका, नई दिल्ली।
7. यादव प्रमोद कुमार, शोधार्थी पी.एच.डी. हिन्दी हैदराबाद विश्वविद्यालय।
8. प्रतियोगिता *साहित्य सीरीज,* आधुनिक काव्य, पेज. न. 86 एवं 87।
9. पुरोहित, शंकर लाल, *हिन्दी में नारी विमर्श,* राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पेज. न. 14।
10. खेतान प्रभा, *''नारी अस्मिता का विमर्श''* छिन्नमस्ता के विशेष संदर्भ में, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली पेज. न. –71 एवं 72।
11. शर्मा उमेश कुमार, *अस्तित्व के अर्थ और स्वरूप पर,* सोशल मीडिया प्रकाशन पेज. न. 4।

****